# विपाक सूत्र अध्ययन की सामाजिक एवं आध्यात्मिक उपयोगिता

डॉ. समणी शशिप्रज्ञा

भारतीय तत्त्वचिंतक महर्षियों ने कर्मवाद पर गहराई से अनुचिन्तन किया है। न्याय, सांख्यु वेदान्त, वैशेषिक, मीमांसक, बौद्ध और जैन सभी दार्शनिकों ने कर्मवाद के सम्बन्ध में चिन्तन किया है पर जैन परंपरा में कर्मवाद का जैसा सुव्यवस्थित रूप उपलब्ध है वैसा अन्यत्र नहीं। कर्मवाद पर जैन परंपरा में अत्यन्त सूक्ष्म, सुव्यवस्थित एवं बहुत ही विस्तृत विवेचन युक्त अनेक स्वतन्त्र विशाल ग्रंथ उपलब्ध हैं। अतः साधिकार कहा जा सकता है कि कर्म सम्बन्धी साहित्य का जैन साहित्य संसार में महत्वपूर्ण स्थान है। स्वतन्त्र कर्म ग्रंथों में जैसे श्वेताम्बर परंपरा में कर्म प्रकृति, कर्मशतक पंचसंग्रह एवं सप्ततिका एवं दिगम्बर परपंरा में षट्खण्डागम, कषायप्राभृत, गोम्मटसार इत्यादि में कर्म सिद्धांत का विश्लेषण उपलब्ध है पर इसके अतिरिक्त भी आगम एवं आगमेतर जैन ग्रंथों में यत्र तत्र कर्म के सम्बन्ध में चर्चाए उपलब्ध है।

कर्म सिद्धान्त जैन दर्शन का एक प्रमुख सिद्धान्त है। उस सिद्धान्त का प्रस्तुत आगम में महावीर कालीन जीवन्त व्यक्तियों के उदाहरणों के माध्यम से विषय को प्रतिपादित किया गया है। कारण-कार्य का सिद्धान्त दर्शन जगत् का आधारभूत सिद्धान्त है। प्रस्तुत आगम में कारण-कार्य के सिद्धान्त के रूप में कर्म को कारण एवं उसके फल (विपाक) को कार्य मानकर सुख-दुःख रूपी परिणामों की यौक्तिक व्याख्या की गई है। विपाक सूत्र अपने अभिधान के अनुसार अशुभ एवं शुभ विपाक सूत्र की विषय- वस्तु,, कर्मों का विपाक–फल प्रदर्शित करने वाला ग्यारहवां अंग शास्त्र है।[1] समस्त कर्म प्रकृतियाँ मुख्यतः दो भागों में विभक्त की जाती है- शुभ एवं अशुभ। इनमें से अशुभ प्रकृतियां पाप-दुःख रूप और शुभ प्रकृतियां पुण्य सातारूप सुख प्रदान करती है। इन दोनों प्रकार की कर्म प्रकृतियों का फल-विपाक दिखलाने के लिए प्रस्तुत शास्त्र को दो श्रुतस्कंधों में विभक्त किया गया है- दुःख विपाक और सुख विपाक। प्रथम श्रतुस्कन्ध में दुःख विपाक एवं द्वितीय श्रुतस्कन्ध में सुख विपाक से सम्बन्धित 10-10 अध्ययनों का वर्णन है। दुःख-विपाक में पाप कर्मों का

और सुख विपाक में पुण्य कर्मों का फल प्रतिपादित किया गया है। कर्म सिद्धान्त जैसे दुरूह सिद्धान्त का अत्यन्त विस्तारपूर्वक सांगोपाग वर्णन बहुसंख्यक स्वतंत्र ग्रथों में उपलब्ध है। मगर वे सबके लिए सुगम-सुबोध नहीं है। इस कमी की पूर्ति का 'विपाक सूत्र' सर्वोत्तम साधन है। इसमें 10-10 कथाओं के माध्यम से कर्म विपाक की प्ररूपणा अत्यन्त सुगम शैली में की गई है। आबाल-वृद्ध को कर्म सिद्धान्त सहजता से समझाने के लिए विपाक सूत्र एक विशिष्ट एवं मौलिक स्थान रखता है। विपाक सूत्र के अध्ययन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि हर अध्ययन में पुनर्जन्म एवं पूर्वजन्म की स्पष्ट चर्चा है। "कडाण कम्माण णमोक्ख आत्थि"[2] इस सिद्धांन्त के प्रणेता भगवान महावीर ने पदे-पदे इस ग्रंथ में इस सत्य को उद्घाटित किया है। अतीत कालीन कर्मों का फल हमारा वर्तमान जीवन है और वर्तमान कर्मों का फल हमारा भावी जीवन है।

दुःख विपाक अध्ययन में एक निर्देशन हैं कि कर्म और पुनर्जन्म का अविच्छेद्य सम्बन्ध है। पुनर्जन्म का अर्थ है— वर्तमान जीवन के पश्चात् का परलोक जीवन। परलोक जीवन किस जीव का कैसा होता है। इसका मुख्य आधार उसका पूर्वकृत कर्म है। इस आगम में मृगापुत्र को गणधर गौतम देखते हैं कि किस प्रकार वह जन्म से ही अंधा, बहरा, लूला-लंगड़ा और हुण्डक संस्थानी हुआ। जिसका पालन-पोषण मृगा देवी ने भूगृह में किया जो अत्यंत असह्य सड़ांध से व्याप्त था। माता द्वारा लाया हुआ भोजन वह किस प्रकार गृद्धिपूर्वक ग्रहण करता है। उदर में जाते ही भस्मक व्याधि के प्रभाव से वह आहार हजम हो जाता है और तत्काल मवाद और रूधिर के रूप में बदल जाता है और कैसे वह मृगापुत्र अपने द्वारा वमित धृणित मलादि को तुरन्त चाट लेता है।[3] इस लोमहर्षक दयनीय दशा को देखकर गौतम स्वामी, जो विश्व के सर्वोतम जिज्ञासु कहे जा सकते हैं, जिन्होंने अपने हर संशय का सटीक एवं यौक्तिक समाधान भगवान महावीर जैसे वीतराग गुरू से प्राप्त किया, जो आज भी हमारा पथ प्रशस्त करता है। गौतम गणधर बड़े ही सौभाग्यशाली शिष्य थे जिन्हें त्रिकालदर्शी गुरू का सतत निकट सान्निध्य प्राप्त हुआ जिससे वे निसंकीय निक्कखंकीय आदि सम्यक दर्शन के आठ अंगों में निष्णात हो गए। भगवान की उपासना में पहुंचकर गौतम गणधर उसकी दुर्दशा का कारण पूछा। तब भगवान ने समाधान स्वरूप उसके पूर्वजन्म का समस्त वृत्तान्त कह सुनाया कि पूर्वजन्म में वही जीव इक्काई नामक राष्ट्रकूट था। जो अत्यन्त अधर्मी एवं अधर्माचारी था। जिसमें आदर्श शासक की एक भी विशेषता नहीं थी। जो हर दृष्टि से भ्रष्ट एवं अधम शासक था। वह प्रजा से अधिक से अधिक कर लेता, रिश्वत खोर, ब्याजखाऊ था। वह निरपराध जनों पर झूठे आरोप लगाकर उन्हें तंग करता, रात-दिन परपीडा स्वरूप पाप कृत्यों में तल्लीन रहता था। अपने पापाचरण स्वरूप उसी भव में अंतिम समय में वह 16 कष्टकारी असाध्य रोग से वेदना भोगता हुआ मरकर नरक में उत्पन्न हुआ।[4] वह लंबी वेदनामय आयु भोगने के पश्चात वह मृगापुत्र के रूप में जन्मा है। फिर गौतम ने उसके भविष्य के विषय में पूछा तो भगवान ने बताया कि यह चारों गतियों के 84 लाख जीवयोनियों में अनेक जन्म-मरण की वेदना भोगने के पश्चात मनुष्य भव में वह सिद्धि प्राप्त करेगा।[5] शासन के माध्यम से प्राप्त सत्ता एवं शक्ति का दुरूपयोग करने वालों, प्रजा पर अनुचित कर भार लादने वालों, परपीड़ा देने वालों के भविष्य का यह एक निर्मल दर्पण है जो अत्यन्त उपयोगी एंव शिक्षाप्रद है।

इसी प्रकार इस पूरे शास्त्र में जो व्यक्ति दुःख से कराह रहा है एवं विविध मारणातिक दण्ड भोग रहा है एवं जो सुख-समृद्धि के सागर में निमग्न है, उन सभी के सम्बन्ध में यह जिज्ञासा व्यक्त की गई है कि यह इस प्रकार कैसे? भगवान महावीर उसका पूर्वभव सुनाकर जिज्ञासु को ऐसा सामधान देते हैं कि वह कर्म की अद्भुत लीला का रहस्य स्वयं समझ जाता है। अन्याय, अत्याचार, वेश्यागमन, प्रजापीड़न, रिश्वत, हिंसा, नरमेध यज्ञ, मांस-भक्षण आदि ऐसे दुष्कृत्य हैं जिनके कारण विविध प्रकार की यातनाएं भोगने का उल्लेख दुःख विपाक में है।

इसी प्रकार सुख विपाक अध्ययन में सुपात्र - दान का प्रतिफल स्वरूप सुख प्राप्ति का रहस्य बताया गया है। किस प्रकार सुबाहु कुमार[6] आदि राजकुमार को रूप-लावण्य के साथ सारी अनुकूल स्थितियां प्राप्त होती है। अपने

पूर्वभव में निर्दोष आह क्तिपूर्वक शुद्ध पंचमहाव्रती को देकर उत्कृष्ट प्रशस्त भावों के फलस्वरूप वह संसार की सीमा कर लेते है। फिर भगवान के समक्ष क्रमशः श्रावक धर्म एवं साधु कर्म स्वीकार करता है। अंत समय में समाधिपूर्वक शरीर का त्याग कर सौधर्म देवलोकों में जन्म लेता है। वहां दैवीय सुख भोगकर बीच-बीच में मनुष्य होकर सभी विषम संख्यक देवलोकों के सुखों का उपभोग करने के बाद सर्वार्थसिद्ध विमान में, जन्म लेता है। सांसारिक सुखों की चरम सीमा होती है। वहां जन्म लेकर तैंतीस सागरोपम जितने दीर्धतर कालपर्यन्त सुख भोगकर महाविदेह में उत्पन्न होगा। वह अणगार बन शाश्वत अनन्त आनन्दमय सिद्धि प्राप्त करेगा।

इस प्रकार इस शास्त्र का समीक्षात्मक अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि कहां मृगापुत्र आदि का दुःखों से परिपूर्ण लम्बा भवभ्रमण और कहां सुबाहु कुमार आदि का सुखमय संसार। दोनों की तुलना करने से पाप और पुण्य का अन्तर सहजता से स्पष्ट हो सकता है। यह शास्त्र एक प्रेरणास्रोत है कि व्यक्ति अपने शुभाशुभ मन, वचन एवं काया की प्रवृत्ति के आधार पर किस प्रकार स्वयं अपने हाथों से अपना अच्छा या बुरा भविष्य का निर्माण करता है। जैन दर्शन का यह आत्मकर्तृत्व का सिद्धान्त वास्तव में ही एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। जो अपने कर्त्तव्य की नैतिक जिम्मेदारी स्वयं व्यक्ति पर डालता है। किसी भी परिस्थिति के लिए व्यक्ति अन्य पर किसी प्रकार का आरोप या आक्षेप नहीं लगा सकता। साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति सुख-दुःख का विभाजन कभी किसी ज्ञाति-मित्र-सम्बन्धी के साथ नहीं कर सकता क्योंकि कर्म कर्ता का ही अनुगमन करता है। उत्तराध्ययन आगम के अनुसार, (कत्तारमेवं अणुजाई कम्मं)[7] अर्थात् इस शास्त्र की घटनाएं यह स्पष्ट करती है कि शुभ-अशुभ प्रवृत्ति का फल व्यक्ति को उसी भव में या अन्य अनेक भवों में अनन्त गुणी होकर भोगनी ही पड़ती है उसे सुख या दुःख रूप में भोगे बिना व्यक्ति का मोक्ष संभव नहीं है। साथ ही यह भी स्पष्ट परिलक्षित होता है कि क्रूर से क्रूर, अधम परम मिथ्यावी जीव भी शुभ करणी के फलस्वरूप अनंत भवों में भटकने के बाद भी काल परिपाक स्वरूप भावों की निर्मलता को प्राप्त कर कंकर से शंकर, बिन्दु से सिन्धु, भक्त से भगवान बन सकता है। इस प्रकार शुभ पुरूषार्थ से व्यक्ति अपनी आत्मा की शुद्ध अनन्त चतुष्टयी स्वरूप में अवस्थित हो सकता है एवं चतुर्गति रूपी संसार भ्रमण का अन्त कर सिद्ध-बुद्ध मुक्त बन सकता है।

इस प्रकार यह शास्त्र यह प्रेरणा प्रदान करता है कि हम अपने हर कार्य के प्रति सजग रहे क्योंकि सदाचरण से सुख एवं दुराचार से दुःख प्राप्त होता है एवं कषायों के प्रशमन की साधना ही व्यक्ति की प्रवृत्ति को नियंत्रित कर सकती है। उत्तराध्यय ने सूत्र के अनुसार राग- द्वेष, ये दोनों ही कर्म बन्धन के मूल स्रोत है एवं इनको सिंचन देने वाले वाले है।[8] दशवैकालिक सूत्रानुसार क्रोध-मान-माया-लोभ ये चार कषाय जो पुनर्भव के वृक्ष रूपी बीज में सिंचन प्रदान करते है।[9] अतः इस शास्त्र के अध्ययन की सार्थकता इसी में है कि हम कर्म से डरे, पाप से डरे अर्थात् हर कर्म के प्रति सजग रहे एवं हर पापकारी प्रवृत्ति करने से पूर्व परिणाम का अवश्य चिन्तन करें। इस शास्त्र के अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि किस प्रकार उस समय की दण्ड व्यवस्था हदयद्रावी थी जिसमें अपराधी को सार्वजनिक रूप से Retributive Punishment (eye for an eye) दिया जाता एवं दर्शक उस दुष्कर्मी को सजा से तड़पते हुए भोगते हुए देखकर भीतर तक कांप उठता था। उस दुष्कर्मी की सजा भविष्य में अमुक अपराध के पुनरावर्तन पर विराम चिन्ह् लगा देती थी। आज के संदर्भ में यदि इस ग्रंथ का अध्ययन करें तो स्त्री उत्पीड़न करने वाले अपराधी को यदि सार्वजनिक तोर पर कड़ी सजा दी जाए तो भविष्य में इस प्रकार की घरेलू हिंसा, बलात्कार, दहेज जनित, आत्महत्याएं आदि को विराम चिन्ह् मिल सकता है। हर प्रवृत्ति से पूर्व परिणाम के आधार पर हमारे Action को Justify करता है। उसके प्रति हमारी सजगता पैदा करता है एवं अपराध के रोकथाम में एक प्रकार की जन जागृति लाता है। इस प्रकार यह शास्त्र आत्म कर्तृत्व के सिद्धान्त को अन्य पर जिम्मेदार न ठहराकर खुद पर हर कार्य का नैतिक उत्तरदायित्व स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है। हर कर्तृत्व का परिणाम व्यक्ति को इस भव में या अन्य भव में अवश्य भोगना

पड़ेगा। अतः यहां परिणामवादी विचारधारा व्यक्ति को नियंत्रित एवं अनुशासित कर एक अपराध मुक्त एवं स्वस्थ, सुखी एवं सफल पारिवारिक जीवन एवं शांतिपूर्ण समाज का निर्माण कर सकता है।

**संदर्भ सूची -**


1. विपाक सूत्र, संपा. मधुकर मुनि, श्री आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर, 2000, पृ. 3
2. उत्तराध्ययन सूत्र, 4.3
3. विपाकसूत्र, 1.18 15-16
4. वही, पृ. 22, 44
5. वही, पृ. 31
6. वही, पृ. 115
7. उत्तराध्ययन सूत्र, संपा., युवाचार्यश्री मधुकर मुनि, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर, 2000, सूत्र, 13.23
8. वही, 32.7
9. दसवेआलियं, सपां, युवाचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्व भारती, लाडनूं, 2007



**सहआचार्य**

**जैन दर्शन एवं तुलनात्मक धर्म तथा दर्शन विभाग**

**जैन विश्व भारती संस्थान**

**लाडनूं - 341306 (राज.)**


◆ ◆ ◆

## महत्त्वपूर्ण सूचना

**अलख दृष्टि (त्रैमासिक)** शोध-पत्रिका के पाठकों, ग्राहकों व शुभचिन्तकों को सूचित किया जाता है कि वे अब भारत की ओरियण्टल बैंक ऑफ कॉमर्स की किसी भी शाखा में खाता नं. 10271131001021 तथा IFSC Code No. ORBC 0101027 में शुल्क, अनुदान या विज्ञापन की राशि जमा कर सकते हैं। साथ ही हमारे कार्यालय को सूचित करें कि अमुक राशि किस ब्रांच में जमा की गई है। इसके अतिरिक्त राशि या शुल्क मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा भी भेज सकते हैं और आप ई-मेल से शोध-लेख भी भेज सकते हैं। पत्रिका का ई-मेल dr.aptripathi@rediffmail.com है। कृपया सुविधा का पूरा लाभ उठाएँ।

—व्यवस्थापक